International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(4): 201-202

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(4): 201-202
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 03-05-2017
Accepted: 04-06-2017

**मोहन लाल**
शोधच्छात्र पी०एच०डी०, संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

**Correspondence**
**मोहन लाल**
शोधच्छात्र पी०एच०डी०, संस्कृत विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

# क्रमदर्शन में सत्तर्क की अवस्थिति एवं माहात्म्य विवेचन

## मोहन लाल

**प्रस्तावना**

शिवाद्वयवाद के नाम से प्रथित क्रम दर्शन में अर्थ नारीश्वर की परिकल्पना स्वीकृत है। वास्तव में काश्मीर शैव दर्शन शिव को ही सम्पूर्ण तथ्यों का मूल मानता है। शिव के बिना शक्ति की परिकल्पना काश्मीरी आचार्यो का मान्य नही है। उनका मानना है कि शक्ति के बिना शिव शव रूप है। इस रूप में क्रम दर्शन ने शक्ति के प्राधान्य को स्वीकार किया है। चाहे चिन्तन की बात हो चाहे किसी दर्शन पढने लिखने अपनाने की बात हो। उसमें भावना का प्राधान्य भी देखा जाता है। उसी भावना को ही कश्मीरी आचार्यों ने सत्तर्क के रूप में मान्यता दी है। यहाँ सन्त शिरोमोण गोस्वामी तुलसीदास जी का कथन समीचीन दिखता है जब वह कहते है कि–

जाकि रही भावना जैसी।
प्रभु मूर्त देखी तिन तैसी।

यदि तर्क की बात करे तो न्यान दर्शन में भी तर्क का प्राधान्य देखने को मिलता है। न्याय सूत्र के प्रवर्त्तक महर्षि वात्स्यायन ने –
''प्रमाण–प्रमेय–संशय–प्रयोजन–दृष्टान्त–सिद्धान्त–अवयव–तर्क–निर्णय–वाद–
जल्प–वितण्डा–हेत्वाभास–छल–जाति–निग्रह–स्थानानि निःश्रेयसाधिगमः'' के रूप में तर्क निःश्रायस के साधन तर्क को मानते है।
न्याय शास्त्र तो तर्क शास्त्र है ही लेकिन काश्मीर शैव दर्शन में यही तर्क भावनाओं के प्राधान्य के चलते सत्तर्क के रूप में काश्मीरी आचार्यो द्वारा मान्य हुआ। तर्क के विविध रूप हो सकते है जिसने तर्क, कुतर्क, सत्तर्क, असत्तर्क आदि। स्वयं तर्कस्य कर्त्ता के रूप में सोमानन्द की शिवदृष्टि का आख्यान कश्मीर शैव दर्शन में देखने को मिलता है क्योंकि शिवदृष्टि काश्मीर शिवाद्वैत दर्शन का दार्शनिक पक्ष को प्रस्तुत करने वाला प्रथमतम ग्रन्थ है और सोमानन्द की यह रचना खण्डन मण्डन की प्रक्रिया को अपनाकर शैव दर्शन की दार्शिनक सूक्ष्मता एवं विलक्षणता को स्पष्ट करती है।
स्पष्ट है खण्डन मण्डन की प्रक्रिया में भी तर्क या सर्त्तक या भावना की प्रमुखता दिखाई पड़ती है। स्वयं आचार्य अभिनवगुप्त ने परमार्थसार एवं तन्त्रालोक में अपने पक्ष को स्थापित करने के लिए सत्तर्क को ही माध्यम बनाया है।
सत्तर्क त्रिक शास्त्र योग शास्त्र से भी सम्बन्धित शास्त्र है। लेकिन यह पातंजल योग शास्त्र के योग सूत्र से भिन्न हैं पातंजल योग शास्त्र में योग के अष्ट अंग है। जबकि त्रिक शास्त्र में प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार, धारणा, तर्क और समाधि इन छः अंगो वाले शास्त्र को योग कहते है। [1] त्रिक शास्त्र के षडाङ्ग योग में पातंजल योग शास्त्र के यम, नियम और आसन यह अंग सम्मिलित नहीं है। इनसे भिन्न त्रिक शास्त्र में तर्क को योग का अंग माना है।
गुरूजन इस त्तर्क को भावना कहते है। यह कामधेनु है। यह इच्छा से भी अतीत वस्तुओं स्फुट करने में समर्थ है। तर्क अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचता है तो भावना हो जाता है। इस लिये भावनारूपी तर्क को योग का उत्तम अंग कहते है। [2] तर्क भी योग के अन्य अंगों के ही समान है फिर भी हेयोपादेय विज्ञान में उपयोगी होने के कारण इसे सर्वोत्तम कहा गया है। योग का अन्तरंग ''ऊह'' होता है। इसलिए इस मार्ग के पथिक को सामान्य सा लगने वाला यह अङग अत्यन्त उपकारी हो जाता है। और भी अपने सिद्धान्त के अनुकूल तर्क के माध्यम से जो विचार करता है, धर्म, ज्ञान, और अपवर्ग रूप पुरूषार्थों के रहस्य को वही जानता है। इस लिये सत्तर्क रूपी हेयोपादेय विज्ञान में परम उपयोगी अङ्ग के माध्यम से साधानायत्न प्रशस्त होता है। इसलिए विषयासक्त पुरूष जो हेय में ही स्थित हो चुका होता है, उसको भी प्रेरित कर यह अनामय पद की प्राप्ति कर देता है।

कहा गया है कि ''गुरू, देव, अग्नि और शास्त्र इनके प्रति श्रद्धा न रखने वाले अधम कोटि के मनुष्य होते हैं। सत्य से परे की झूठी युक्तियों से भरे विचारों से प्रभावित रूखे तर्को का आश्रय लेने वाले, अमोक्ष में ही मोक्ष की भावना रखने वाले ऐसे लोगों को माया भ्रम में उलझे रहने के लिये विवश कर देती है। [3] लोक में नित्य अनित्य आदि विडम्बनापूर्ण मान्यता वाले जितने हेतुशास्त्र है। वे अनिश्चयपूर्ण है। ये वाद, जल्प और वितण्डा के चक्कर में पडे रहते है। वे किसी कारण विशेष के लक्ष्य की सिद्धि में निष्ठा रख कर प्रवृत्त होते है। वस्तु शून्य तथ्यविहीन, ज्ञान और योग की वास्तविकता से अलग, दिव्यशक्तियों के अनुग्रह से रहित है। उन्हें पुरूषार्थों का सही ज्ञान भी नही होता। अज्ञान से निबद्ध, अधर्म से प्रेरित जिसे शास्त्रों की सरणी में फंसे हुए लोग नरक को ही भागी होते हैं। इत्यादि उद्धरणों के द्वारा असत्तर्क की निन्दा ही की गयी है। उनको अधम ही कहा गया है एक विशेष गुरु का निषेध भ्ज्ञी किया गया है। ''तार्किक विद्वन्मन्य को गुरू नही बनावे''। [4] तार्किक मान्यता में वध ही है और बन्धन भी है। इसलिए आप्त गुरूजनों ने कहा है वस्तुगत तथ्य की निर्णयात्मकता से शून्य, अभिमान मूलक, पारस्परिक विवाद बुद्धि से युक्त तार्किक ऊहापाहों से दूर ही रहना श्रेयस्कर है।[5] इसलिये इसे किसी अर्थ में उत्तम नहीं कहा जा सकता है। परन्तु इसे योग का उत्तम भी कहा गया है। फिर कौन बात मानी जाय। इस पर विचार किया जाये तो तर्क दो प्रकार का होता है। (क) वस्तुनिर्णय शून्य, छलादि प्रधान और दूसरे को हरा कर अपनी उत्कृष्टता सिद्ध करने वाला और (ख) हेयोपोदय विवेक पूर्ण वास्तविकता का निर्णायक, छल आदि से शून्य और वाद प्रधान तर्क। इसमें पहला तर्क वस्तुनिर्णय से शून्य हैं अतएव निन्दनीय है। इसीलिये वस्तुनिर्णय से शून्य तथा निश्चयहीन तर्क को भ्रान्त कहा है।

वस्तुतः क्या हेय है और क्या उपादेय है ? इस प्रकार आलोचना कर वस्तु शुद्धि के प्रति जो सावधान होता है और हेय का परित्याग कर उपोदय मे विश्रन्ति प्राप्त करने में कारण बनता है, वही तर्क उत्तम योगाङ्ग कहा जाता है। इसलिये हम कह सकते है कि अद्वयशास्त्र प्रतिपादित तर्क ही सर्त्तक है।

सत्तर्क से सद्वस्तु में प्रवृति होती है। यह सत्तर्क शुद्ध विद्या ही है। यह परमेश्वर की इच्छा रूप रूप होती है। [6] सत्तर्क के योग से सदगुरू को प्राप्त कर सकते है। सत्तर्क के तीन कारणों से उल्लखित होता है। 1. सामान्य गुरूजनों के उपदेशों से 2. शास्त्र ज्ञान से 3. किसी भाग्यशाली साधक में सत्तर्क स्वतः भी उल्लसित हो उठता है। [7]

जिस साधक को गुरू और शास्त्र की अपेक्षा किये बिना पारमेश्वर शक्तिपात हो जाता है, वह महामुनि है, वह वस्तुतः तत्त्व निष्ठ है और वह सांसिद्धिक कहलाता है, उसे सुनिश्चित आत्मज्ञान हो जाता है। [8]

प्रश्न उठता है उस परम तत्त्व की प्राप्ति में गुरू आदि अन्य कई कारण है केवल स्वतः श्रेष्ठ कारण क्यों है। इसका उल्लेख कर रहे है। किरणा नामक संहिता ग्रन्थ में मायात्मकता से शून्य सर्वोत्ष्ट परम तत्त्व को जानने के विषय में लिखा है कि ''माया से शून्य पर तत्त्व को जानने के तीन कारण हैं। 1. गुरू 2. शास्त्र 3. स्वयम्। इन तीनों में उत्तरोत्तर श्रेष्ठ है। गुरू शास्त्र ज्ञान में उपाय है। शास्त्र स्वतः ज्ञान में उपाय है। इस प्रकार उपायों में भी कुछ हेय है। वस्तुतः ''स्वतः'' सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

## संदर्भ सूची


1. प्राणायामस्तधा ध्यानं प्रत्याहारोऽथ धारणा।
   तर्कश्चैव समाधिश्च षडङ्गो योग उच्यते। तं० विं आ० 4ध्15 पृ० 11
2. श्रीपूर्वशास्त्रे तत्प्रोक्तं तर्की योगाङ्गमुत्तमम्।
   हेयाद्यालोचनात्तस्मामत्तत्र यत्नः प्रशस्यते।। तं० आ० 4ध्15
   मार्गे चेतः स्थिरीभूतं हेयेऽपि विषयेच्छया।
   प्रेयं तेन नयेत्तावद्यावत्पदमनामयम्।। तं० आ० 4ध्16
3. गुरूदेवाग्निशास्त्रस्य ये न भक्ता नराधमाः।
   असद्युक्ति विचारज्ञः शुष्कतर्कावलम्बिनः।।
   भ्रमयत्येव तान्माया ह्यर्माक्षे मोक्षलिप्सया। तं० वि० आ० 4ध्17 पृ० 13
4. तार्किकं न गुरू कुर्यात्।
   तार्किके वधबन्धम्। तं० वि० आ० 4ध्17 पृ० 14
5. वस्तुनिर्णय शून्याभिर्वोधिताभिः परस्परम्।
   अभिमानैकसाराभिर्जिह्मीमप्तर्कबुद्धिभिः। तं० वि० आ० 4ध्17 पृ० 14
6. यत्र रूदिः प्रजायेत युक्तियुक्ते विनिश्चयात्।
   शुद्धविद्या प्रसादोऽसावित्याह भगवाञ्छिवः।। तं० वि० आ० 4ध्34 पृ० 30
7. स तावत्कस्यचित्तर्कः स्वत एव प्रवर्तते।
   सा च सांसिद्धिकः शास्त्रे प्रोक्तः स्वप्रत्ययात्मकः।। तं० वि० आ० 4ध्40–41(क)
8. गुरूशास्त्रानपेक्षं च यस्थैतत्स्वयमुद्भवेत्।
   स सांसिद्धिक इत्युक्तस्तत्त्वनिष्ठो महामुनिः। तं० वि० आ० 4ध्41 पृ० 34